प्रेम वाहिनी

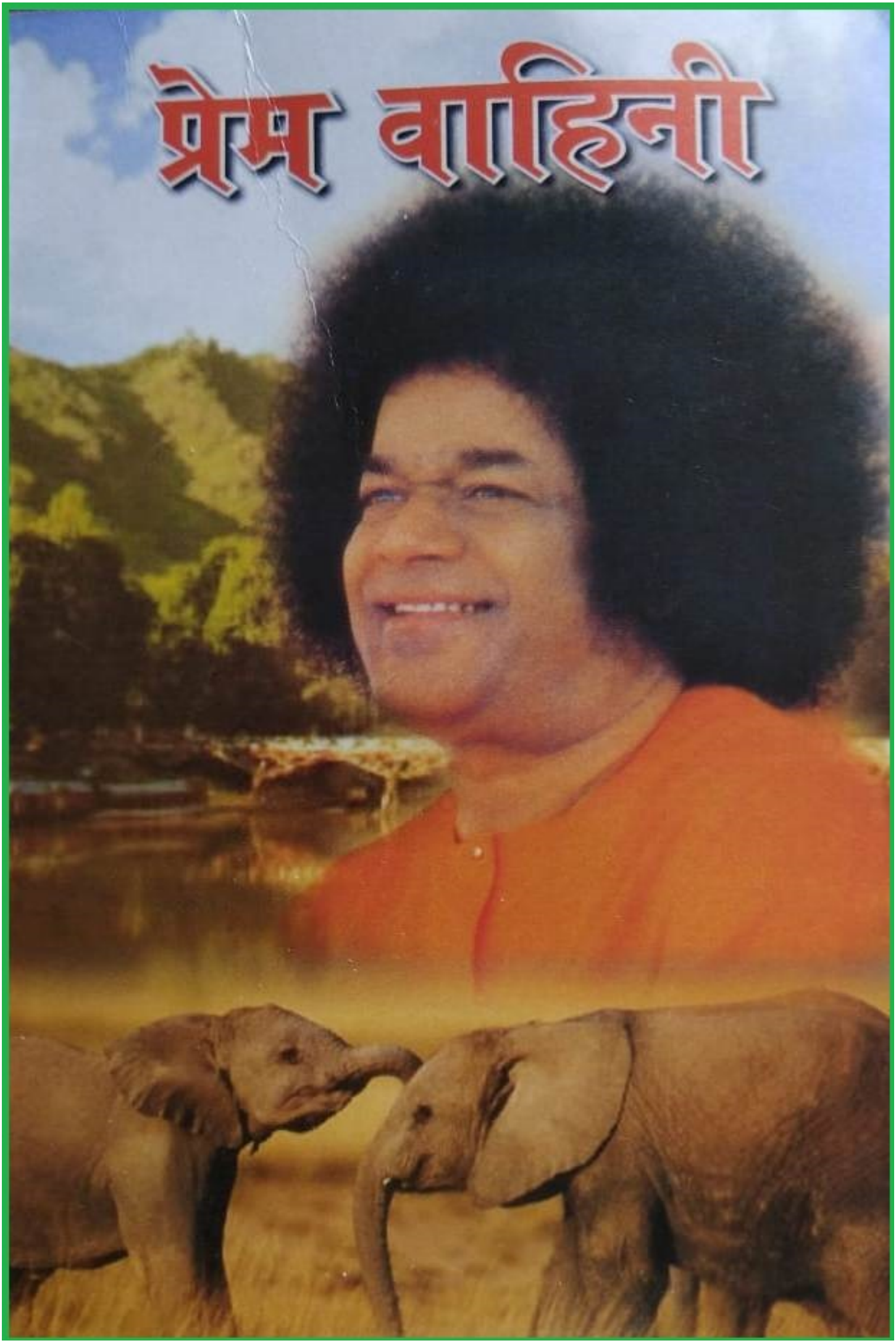

९

अहंकार से अशान्ति उत्पन्न होती है

मानव नाना प्रकार की स्वार्थी आदतों और वृत्तियों को अपने में उत्पन्न कर लेता है, उनका विकास कर लेता है, इस प्रकार वह अपने लिए महान् असन्तोष पैदा कर लेता है। इन सबके लिए उसे अपने संचित शक्ति बोध से शक्ति, अधिकार और सत्ता को अधिकाधिक मात्रा में प्राप्त करने, और अपूर्ण तथा नाशवान् पदार्थों के लोभ से प्रबल प्रेरणा मिलती है। वास्तविकता तो यह है कि मनुष्य इन्हें कभी भी उतनी मात्रा में प्राप्त ही नहीं कर सकता, जिससे कि वह तृप्त और सन्तुष्ट हो सके। एक मात्र सर्वेश्वर ही सर्वशक्तिमान होता है, जो कि सभी का स्वामी प्रभु होता है। सभी कलाओं का ज्ञाता होकर अथवा सम्पूर्ण धन का स्वामी होकर, अथवा सभी ज्ञान का भण्डार होकर अथवा सभी शास्त्रों में पारंगत होने से गर्व और प्रसन्नता का अनुभव करने लगता है, परन्तु उसे यह सब कहां, किससे प्राप्त हुआ है? निश्चय ही वे स्रोत उससे अधिक महान् होंगे। भले ही व्यक्ति यह घोषणा करे कि यह सब उसके स्वयं के अध्यावसाय के परिणामस्वरूप प्राप्त किया है, यह केवल उसी के घोर अथक परिश्रम का फल है। परन्तु निश्चय ही यह किसी एक अथवा अनेक ने उसे किसी न किसी रूप में दिया है। वह इसे झुठला नहीं सकता। वह स्रोत जहां से सभी अधिकार और शक्ति उद्भूत् होती हैं, सर्वेश्वर है। उस सर्वशक्तिमान् की उपेक्षा करके यदि कोई भ्रमवश यह कल्पना करले कि यह यत्किंचित् अल्प शक्ति, जो उसे प्राप्त है, केवल उसी के परिश्रम का फल है तो निस्सन्देह यह उसका स्वार्थ, भ्रम, घमण्ड और अहंकार मात्र है।

यदि कोई व्यक्ति वास्तव में शक्ति का आधार है तो उसे सत्यता, दयालुता, प्रेम, धैर्य, सहनशक्ति और कृतज्ञता के गुणों से युक्त होना चाहिये। जहाँ भी ये सद्गुण होते हैं, अहंकार पलायन कर जाता है, उसके लिये वहाँ कोई स्थान नहीं होता है। इसलिये इन गुणों का अपने में विकास करने की चेष्टा करो।

आत्मा का प्रकाश अहंकार से आच्छादित हो जाता है। इसलिये जब अहंकार नष्ट हो जाता है तभी संकटों को अंत हो जाता है, सभी असन्तोष अदृश्य हो जाते हैं और आनन्द की उपलब्धि हो जाती है। जैसे सूर्य कोहरे में छिप जाता है, अहंकार की भावना शाश्वत आनन्द को छिपा देती है। नेत्रों के खुले रहने पर भी एक दंफ्ती या कपड़े के टुकड़े से दृष्टि को प्रभावी रूप से सफलतापूर्वक अवरुद्ध किया जा सकता है। इसी प्रकार स्वार्थ भी मनुष्य को भगवान के दर्शन पाने से रोक़ देता है; जबकि सत्य तो यह है कि वह भगवान् ही हमारे सबसे समीप होता है। अनेक साधकों, तपस्वियों, साधुओं और सन्यासियों ने जो दीर्घकाल की साधना और तपस्या से, कष्ट और बलिदान से, जो पुण्य लाभ अर्जित किया उसे स्वार्थ से जक़ड़े होने के कारण खो दिया; क्योंकि भगवान् के साक्षात्कार के बिना शक्ति एक ऐसी दीवार की तरह होती है जिसका कोई आधार या नींव ही न होवे। कोरा पांडित्य प्रदर्शन किस काम का? वेद, शास्त्र, उपनिषद् तो दैनिक जीवन में उतारे जाने वाले सिद्धांतों का संग्रह होते हैं। इसलिये बिना इस व्यावहारिक ज्ञान के, व्यक्ति का शब्द भण्डार चाहे जितना विशाल होवे, उसकी विद्वता चाहे जितनी उच्चकोटि की होवे, वह सब भीषण बर्बादी है। वेद, शास्त्रों और उपनिषदों के ज्ञान को अपने वास्तविक जीवन में उतारने के लिए व्यक्ति को "मैं जानता हूं," की भावना का त्याग करना पड़ता है और उसे अपने ज्ञानचक्षु सार-ज्ञान के दर्शन के लिये खुले रखने पड़ते हैं और उस पर मनन करना होता है तब निश्चय ही व्यक्ति को आनन्द की प्राप्ति होती है।

पंचाग (पत्रा) में १० विस्वा वर्षा लिखी हो सकती है परन्तु चाहे कोई उसको दस बार मोड़कर भी दबाये तो एक बूँद भी वर्षा उससे नहीं प्राप्त की जा सकती है। पंचांग का उद्देश्य वर्षा का जल देना नहीं बल्कि यह सूचना देना होता है कि इस वर्ष कितनी वर्षा किस प्रकार से होगी। इसके पृष्ठों में तो दस बूंद भी जल नहीं होता है। वर्षा का जल तो आकाश में स्थित बादलों में होता है। इसी प्रकार शास्त्र तो सिद्धांतों, नियमों, उपनियमों और स्वयं-सिद्धियों और कर्तव्यों के सम्बन्ध में सूचना मात्र देते हैं। वेद, शास्त्र

उपनिषदों की यह महान् विशेषतायें हैं कि वे शान्ति और मोक्ष-प्राप्ति के उपायों और क्रियाओं के सम्बन्ध में शिक्षा देते हैं। परन्तु उनमें यह आनन्द का सार भरा नहीं है कि कोई इन पाठों का केवल पारायण करदे, अथवा दबा कर निचोड़ लेवे। व्यक्ति को इनमें वर्णित मार्ग, दिशा और लक्ष्य को स्वयं खोजना पड़ता है, उस मार्ग पर उसी दिशा में उसी प्रकार चलना पड़ता है और तब लक्ष्य पर पहुंचा जाता है। यदि फिर भी, "मैं सब जानता हूं" की चेतना अहंकार उत्पन्न कर दे तो इस भ्रम से मृत्यु हो जाती है। मोक्ष का रहस्य इस ज्ञान को आत्मसात् कर लेने में रहता है। पुनर्जन्म तो अपरिहार्य है ही, यदि इस संकट से न बच सके तो।

यदि इस सबसे सावधान होकर तुम आध्यात्मिक साधनों में रत हो गये तो संसार और उनकी दुश्चिन्तायें तुम्हें प्रभावित न कर सकेंगी। इस सत्य से दूर रहने पर ही तुम्हें कष्ट भोगना पड़ता है। पीड़ा होती है और भवबाधायें सताती हैं। बाजार से दूर स्थित होने पर तो स्पष्ट कोलाहल नहीं सुनाई देता है परन्तु ज्यों-ज्यों हम इसके समीप बढ़कर आते हैं और इसमें प्रवेश करते हैं हमें स्पष्ट रूप से बाजारू सौदेबाजी की पृथक्-पृथक् ध्वनियां सुनाई पड़ने लगती हैं। इसी प्रकार जब तक परमात्मा तत्व से साक्षात्कार नहीं हो जाता है, तुम जागतिक कोलाहलों से अभिभूत् और अशक्त बने रहते हो; परन्तु एक बार भी जब तुम गम्भीर आध्यात्मिक प्रकाश में संलग्न हुये तो हर बात स्पष्ट हो जायेगी और तुम्हारे अन्दर वास्तविक सत्ता का ज्ञान उदय हो जावेगा। जब तक ऐसा नहीं होता तुम निरर्थक तर्क-वितर्कों, शास्त्रार्थों और पांडित्य प्रदर्शनों के कोलाहल में डूबे रहोगे।